1 भीष्म साहनी

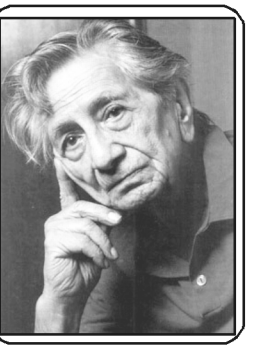

व्यक्तित्व

भीष्म साहनी का जन्म रावलपिंडी (पाकिस्तान) में 8 अगस्त, सन् 1915 ई० को हुआ था। पिता का नाम हरबंशलाल था। राष्ट्रीय आन्दोलन और देश-विभाजन की घटनाओं का आपके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। 1957 से 1963 तक आपने मास्को के विदेशी-भाषा-प्रकाशन-गृह में अनुवादक के रूप में काम किया और टालस्टाय, आस्त्रास्की आदि की रचनाओं के अनुवाद किये। दिल्ली कॉलेज में अंग्रेजी के वरिष्ठ प्रवक्ता के पद पर भी साहनी जी ने कार्य किया। 88 वर्ष की उम्र में 11 जुलाई, सन् 2003 ई० को इस कथा लेखक का निधन हो गया।

कृतित्व

भीष्म जी के तीन कथा-संकलन प्रकाशित हो चुके हैं—'**भाग्यरेखा**', '**पहला पाठ**' और '**भटकती राख**'। '**झरोखे**', '**कड़ियाँ**', '**तमस**' आदि उपन्यास भी आपने लिखा।

कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

भीष्म साहनी गहनतम मानवीय संवेदनाओं के कथाकार थे। आपकी विचार-दृष्टि राष्ट्रीय और समाजपरक थी। आप अपनी कहानियों में निम्न मध्यवर्गीय परिवारों के अन्तरंग चित्र बड़े मार्मिक रूप में प्रस्तुत करते थे। कहानियों के विषय जाने-पहचाने होते थे, किन्तु भीष्म साहनी की विशेषता उनके किसी नये कोण को उजागर करने में थी। व्यंग्य और करुणा आपकी कहानियों के प्रमुख गुण हैं। कहानियों में प्रायः ही किसी न किसी प्रकार की विडम्बना को अभिव्यक्ति मिली है, जो किसी-न-किसी रूप में हमारे वर्तमान समाज के अन्तर्विरोधों की ओर संकेत करती है। आपकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं—'**माता-विमाता**', '**बीवर**', '**सिर का सदका**', '**प्रोफेसर**', '**कटघरे**', '**अपने-अपने बच्चे**', '**कुछ और साल**', '**खून का रिश्ता**', '**चीफ की दावत**', '**सिफारिशी चिट्ठी**', '**वाङ् चू**' आदि।

आपकी कथाशैली की प्रमुख विशेषता है सरलता और सहजता। आधुनिक कहानी की पेचीदगी, प्रतीकात्मकता और सूक्ष्म शिल्प आपकी कहानियों में नहीं है, किन्तु प्रेषणीयता और प्रभाव की दृष्टि से वे निश्चय ही बेजोड़ ठहरती हैं। आपकी कथा-शैली में 'रिपोर्ताज' की पद्धति का विशिष्ट उपयोग मिलता है। कहानियों की भाषा व्यावहारिक हिन्दी है, जिसमें उर्दू की शब्दावली का विशेष योगदान रहता है। जिस प्रकार आपकी कहानियों का विषय-वस्तु व्यक्तिनिष्ठ न होकर समाजपरक है, उसी प्रकार उनकी भाषा भी पूर्वाग्रह-मुक्त और लोकपरक है। आधुनिक कहानीकारों में आपका विशिष्ट स्थान है।

खून का रिश्ता

खाट की पाटी पर बैठा चाचा मंगलसेन हाथ में चिलम थामे सपने देख रहा था। उसने देखा कि वह समधियों के घर बैठा है और वीरजी की सगाई हो रही है। उसकी पगड़ी पर केसर के छींटें हैं और हाथ में दूध का गिलास है जिसे वह घूँट-घूँट करके पी रहा है। दूध पीते हुए कभी बादाम की गिरी मुँह में जाती है, कभी पिस्ते की। बाबूजी पास खड़े समधियों से उसका परिचय करा रहे हैं। यह मेरा चचाजाद छोटा भाई है, मंगलसेन! समधी मंगलसेन के चारों ओर घूम रहे हैं। उनमें से एक झुककर बड़े आग्रह से पूछता है और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और? अच्छा, ले आओ, आधा गिलास, मंगलसेन कहता है और तर्जनी से गिलास के तल में से शक्कर निकाल-निकालकर चाटने लगता है...

मंगलसेन ने जीभ का चटखारा लिया और सिर हिलाया। तम्बाकू की कड़वाहट से भरे मुँह में भी मिठास आ गयी, मगर स्वप्न भंग हो गया। हल्की-सी झुरझुरी मंगलसेन के सारे बदन में दौड़ गयी और मन सगाई पर जाने के लिए ललक उठा। यह स्वप्नों की बात नहीं थी, आज सचमुच भतीजे की सगाई का दिन था। बस, थोड़ी देर बाद ही सगे सम्बन्धी घर आने लगेंगे, बाजा बजेगा, फिर आगे-आगे बाबूजी, पीछे-पीछे मंगलसेन और घर के अन्य सम्बन्धी, सभी सड़क पर चलते हुए, समधियों के घर जायेंगे।

मंगलसेन के लिए खाट पर बैठना असम्भव हो गया। बदन में खून तो छटाँक-भर था, मगर ऐसा उछलने लगा था कि बैठने नहीं देता था।

ऐन उसी वक्त कोठरी में सन्तू आ पहुँचा और खाट पर बैठकर मंगलसेन के हाथ में से चिलम लेते हुए बोला, ''तुम्हें सगाई पर नहीं ले जायेंगे, चाचा।''

चाचा मंगलसेन के बदन में सिर से पाँव तक लरजिश हुई। पर यह सोचकर कि सन्तू खिलवाड़ कर रहा है, बोला, ''बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते, कई बार कहा। मुझे नहीं ले जायेंगे, तो क्या तुम्हें ले जायेंगे?''

''किसी को भी नहीं ले जायेंगे। वीरजी कहते हैं, सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी जायेंगे और कोई नहीं जायेगा।''

''वीरजी आये हैं?'' चाचा मंगलसेन के बदन में फिर लरजिश हुई और दिल धक-धक करने लगा। सन्तू घर का पुराना नौकर था, क्या मालूम ठीक ही कहता हो।

''ऊपर चलो, सब लोग खाना खा रहे हैं।'' सन्तू ने चिलम के दो कश लगाये, फिर चिलम को ताक पर रखा और बाहर जाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने फिर एक बार घूमकर हँसते हुए कहा। ''तुम्हें नहीं ले जायेंगे, चाचा, लगा लो शर्त, दो-दो रुपये की शर्त लगती है?''

''बस, बक-बक नहीं कर, जा अपना काम देख!''

ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। सन्तू ने गलत नहीं कहा था। रसोईघर में एक तरफ, दीवार के साथ पीठ लगाये बाबूजी बैठे खाना खा रहे थे। चौके के ऐन बीच में वीरजी और मनोरमा, भाई-बहन, एक साथ, एक ही थाली में खाना खा रहे थे। माँ जी चूल्हे के सामने बैठी पराठे सेंक रही थीं। माँ बेटे को समझा रही थी, ''यही मौके खुशी के होते हैं, बेटा! कोई पैसे का भूखा नहीं होता। अकेले तुम्हारे पिताजी सगाई डलवाने जायेंगे तो समधी भी इसे अपना अपमान समझेंगे।''

''मैंने कह दिया, माँ मेरी सगाई सवा रुपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जायेंगे। जो मंजूर नहीं हो तो अभी से...''

''बस-बस, आगे कुछ मत कहना।'' माँ ने झट से टोकते हुए कहा। फिर क्षुब्ध होकर बोली, ''जो तुम्हारे मन में आये करो। आजकल कौन किसकी सुनता है। छोटा-सा परिवार और इसमें भी कभी कोई काम ढंग से नहीं हुआ। मुझे तो पहले ही मालूम था, तुम अपनी करोगे।''

''अपनी क्यों करेगा, मैं कान खींचकर इसे मनवा लूँगा।'' बाबूजी ने बेटे की ओर देखते हुए बड़े दुलार से कहा।

पर वीरजी खीझ उठे, ''क्या आप खुद नहीं कहा करते थे कि ब्याह-शादियों पर पैसे बर्बाद नहीं करना चाहिए। अब अपने बेटे की सगाई का वक्त आया तो सिद्धान्त ताक पर रख दिये। बस, आप अकेले जाइये और सवा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइये।''

''वाह जी, मैं क्यों न जाऊँ? आजकल बहनें भी जाती हैं।'' मनोरमा सिर झटककर बोली, ''वीरजी, तुम इस मामले में चुप रहो।''

"सुनो, बेटा, न तुम्हारी बात, न मेरी", बाबूजी बोले, "केवल पाँच या सात सम्बन्धी लेकर जायेंगे। कहोगे तो बाजा भी नहीं होगा। वहाँ उनसे कुछ माँगेंगे भी नहीं। जो समधी ठीक समझें दे दें, हम कुछ नहीं बोलेंगे।"

इस पर वीरजी तुनककर कुछ कहने जा ही रहे थे, जब सीढ़ियों पर मंगलसेन के कदमों की आवाज आयी।

"अच्छा, अभी मंगलसेन से कोई बात नहीं करना। खाना खा लो, फिर बातें होती रहेंगी।" माँजी ने कहा।

पचास बरस की उम्र के मंगलसेन के बदन के सभी चूल ढीले पड़ गये थे। जब चलता तो उचक-उचककर हिचकोले खाता हुआ और जब सीढ़ियाँ चढ़ता तो पाँव घसीटकर, बार-बार छड़ी ठकोरता हुआ। जब भी वह सड़क पर जा रहा होता, मोड़ पर का साइकिलवाला दूकानदार हमेशा मंगलसेन से मजाक करके कहता, "आओ, मंगलसेनजी, पेच कस दें।" और जवाब में मंगलसेन हमेशा उसे छड़ी दिखाकर कहता, "अपने से बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते। तू अपनी हैसियत तो देख!"

मंगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में फौज में रह चुका था, इस कारण अब भी सिर पर खाकी पगड़ी पहनता था। खाकी रंग सरकारी रंग है, पटवारी से लेकर बड़े-बड़े इन्सपेक्टर तक सभी खाकी पगड़ी पहनते हैं। इस पर ऊँचा खानदान और शहर के धनी-मानी भाई के घर में रहना, ऐंठता नहीं तो क्या करता?

दहलीज पर पहुँचकर मंगलसेन ने अन्दर झाँका। खिचड़ी मूँछें सस्ता तम्बाकू पीते रहने के कारण पीली हो रही थीं। घनी भौंहों के नीचे दायीं आँख कुछ ज्यादा खुली हुई और बायीं आँख कुछ ज्यादा सिकुड़ी हुई थी सामने के तीन दाँत गायब थे।

"भौजाईजी, आप रोटियाँ सेंक रही हैं? नौकरों के होते हुए..."

"आओ मंगलसेनजी, आओ, जरा देखो तो यहाँ कौन बैठा है!"

"नमस्ते, चाचाजी!" वीरजी ने बैठे-बैठे कहा।

"उठकर चाचाजी को पालागन करो, बेटा, तुम्हें इतनी भी अक्ल नहीं है!" बाबूजी ने बेटे को झिड़ककर कहा।

वीरजी उठ खड़े हुए और झुककर चाचाजी को पालागन किया। चाचाजी झेंप गये।

कोने में बैठा सन्तू, जो नल के पास बर्तन मलने लगा था, कन्धे के पीछे मुँह छिपाये हँसने लगा।

"जीते रहो, बड़ी उम्र हो!" मंगलसेन ने कहा और वीरजी के सिर पर इस गम्भीरता से हाथ फेरा कि वीरजी के बाल बिखर गये।

मनोरमा खिलखिलाकर हँसने लगी।

"सगाईवाले दिन वीरजी खुद आ गये हैं। वाह-वाह!"

"बैठ जा, बैठ जा, मंगलसेन, बहुत बातें नहीं करते," बाबूजी बोले।

"आप मेरी जगह पर बैठ जाइए, चाचाजी, मैं दूसरी चटाई ले लूँगा।" वीरजी ने कहा।

"दो मिनट खड़ा रहेगा तो मंगलसेन की टाँगें नहीं टूट जायेंगी।" बाबूजी बोले, "यह खुद भी चटाई पकड़ सकता है। जाओ मंगलसेन, जरा टाँगें हिलाओ और अपने लिए चटाई उठा लाओ।"

माँजी ने दाँत तले होंठ दबाया और घूर-घूरकर बाबूजी की ओर देखने लगीं, "नौकरों के सामने तो मंगलसेन के साथ इस तरह रूखाई से नहीं बोलना चाहिए। आखिर तो खून का रिश्ता है, कुछ लिहाज करना चाहिए।"

मंगलसेन छज्जे पर से चटाई उठाने गया। दरवाजे के पास पहुँचकर, नौकर की पीठ के पीछे से गुजरने लगा, तो सन्तू ने हँसकर कहा,"वहाँ नहीं है, चाचाजी, मैं देता हूँ, ठहरो। एक ही बर्तन रह गया है, मलकर उठता हूँ।"

सन्तू निश्चिन्त बैठा, कन्धों के बीच सिर झुकाये बर्तन मलता रहा।

मनोरमा घुटनों के ऊपर अपनी ठुड्डी रखे, दोनों हाथों से अपने पैरों की उँगलियाँ मलती हुई, कोई वार्ता सुनाने लगी, "दूकानदारों की टाँगें कितनी छोटी होती हैं, भैया, क्या तुमने कभी देखा है?" अपने भाई की ओर कनखियों से देखकर हँसती हुई बोली, "जितनी देर वे गद्दी पर बैठे रहे, ठीक लगते हैं, पर जब उठें तो सहसा छोटे हो जाते हैं, इतनी छोटी-छोटी टाँगें। आज मैं एक दूकान पर सूटकेस लेने गयी..."

"उठो, सन्तू चटाई ला दो। हर वक्त का मजाक अच्छा नहीं होता।" चाचा मंगलसेन सन्तू से आग्रह करने लगा।

"वहाँ खड़े क्या कर रहे हो, मंगलसेन? चलो, इधर आओ! उठ सन्तू, चटाई ले आ, सुनता नहीं तू? इसे कोई बात कहो तो कान में दबा जाता है!" माँ बोली।

सन्तू की पीठ पर चाबुक पड़ी। उसी वक्त उठा और जाकर चटाई ले आया। माँजी ने चूल्हे के पास दीवार के साथ रखी दो थालियों में से एक थाली उठाकर मंगलसेन के सामने रख दी। मैले रूमाल से हाथ पोंछते हुए मंगलसेन चटाई पर बैठ गया। थाली में आज तीन भाजियाँ रखी थीं, चपातियाँ खूब गरम-गरम थीं।

सहसा बाबूजी ने मंगलसेन से पूछा, "आज रामदास के पास गये थे? किराया दिया उसने या नहीं?"

मंगलसेन खुशी में था। उसी तरह चहककर बोला, "बाबूजी, वह अफीमची कभी घर पर मिलता है, कभी नहीं। आज घर पर था ही नहीं।"

"एक थप्पड़ मैं तेरे मुँह पर लगाऊँगा, तुमने क्या मुझे बच्चा समझ रखा है?"

रसोईघर में सहसा सन्नाटा छा गया। माँ ने होंठ भींच लिये। मंगलसेन की पुलकन सिहरन में बदल गयी। उसका दायाँ गाल हिलने-सा लगा, जैसे चपट पड़ने पर सचमुच हिलने लगता है।

"छह महीने का किराया उस पर चढ़ गया है, तू करता क्या रहता है?"

नुक्कड़ में बैठे सन्तू के भी हाथ बर्तनों को मलते-मलते रुक गये। भाई-बहन फर्श की ओर देखने लगे। हाय बेचारा, मनोरमा ने मन-ही-मन कहा और अपने पैरों की उँगलियों की ओर देखने लगी। वीरजी का खून खौल उठा। चाचाजी गरीब हैं, इसीलिए इन्हें इतना दुत्कारा जाता है...

"और पराठा डालूँ, मंगलसेनजी?" माँ ने पूछा। मंगलसेन का कौर अभी गले में ही अटका हुआ था। दोनों हाथों से थाली को ढँकते हुए हड़बड़ाकर बोला, "नहीं, भौजाई जी, बस जी!"

"जब मेरे यहाँ रहते यह हाल है, तो जब मैं कभी बाहर जाऊँगा तो क्या हाल होगा? मैं चाहता हूँ, तू कुछ सीख जाये और किराये का सारा काम सँभाल ले। मगर छह महीने तुझे यहाँ आये हो गये, तूने कुछ नहीं सीखा।"

इस वाक्य को सुनकर मंगलसेन के सर्द लहू में थोड़ी-सी हरारत आयी।

"मैं आज ही किराया ले आऊँगा, बाबूजी! न देगा तो जायेगा कहाँ? मेरा भी नाम मंगलसेन है!"

"मुझे कभी बाहर जाना पड़ा, तो तुम्हीं को काम सँभालना है। नौकर कभी किसी को कमाकर नहीं खिलाते। जमीन-जायदाद का काम करना हो तो सुस्ती से काम नहीं चलता। कुछ हिम्मत से काम लिया करो।"

मंगलसेन के बदन में झुरझुरी हुई। दिल में ऐसा हुलास उठा कि जी चाहा पगड़ी उतारकर बाबूजी के कदमों पर रख दे। हुमककर बोला, "चिन्ता न करो जी, मेरे होते यहाँ चिड़ी फड़क जाये तो कहना? डर किस बात का? मैंने लाम देखी है, बाबूजी! बसरे की लड़ाई में कप्तान रस्किन था हमारा। कहने लगा, देखो मंगलसेन, हमारी शराब की बोतल लारी में रह गयी है वह हमें चाहिए। उधर मशीनगन चल रही थी। मैंने कहा, अभी लो, साहब! और अकेले मैं वहाँ से बोतल निकाल लाया। ऐसी क्या बात है..."

मंगलसेन फिर चहकने लगा। मनोरमा मुसकरायी और कनखियों से अपने भाई की ओर देखकर धीमे से बोली, "चाचाजी की दुम फिर हिलने लगी!"

मंगलसेन खाना खा चुका था। उठते हुए हँसकर बोला, "तो चार बजे चलेंगे न सगाई डलवाने?"

"तू जा, अपना काम देख, जो जरूरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे।" बाबूजी बोले।

चाचा मंगलसेन का दिल धक-से रह गया। सन्तू शायद ठीक ही कहता था, मुझे नहीं ले चलेंगे। उसे रुलाई-सी आ गयी, मगर फिर चुपचाप उठ खड़ा हुआ, बाहर जाकर जूते पहने, छड़ी उठायी और झूलता हुआ सीढ़ियों की ओर जाने लगा।

वीरजी का चेहरा क्रोध और लज्जा से तमतमा उठा। मनोरमा को डर लगा कि बात और बिगड़ेगी, वीरजी कहीं बाबूजी से न उलझ बैठें। माँजी को भी बुरा लगा। धीमे से कहने लगीं, "देखो जी, नौकरों के सामने मंगलसेन की इज्जत-आबरू का कुछ तो ख्याल रखा करो। आखिर तो खून का रिश्ता है। कुछ तो मुँह-मुलाहिजा रखना चाहिए। दिन-भर आपका काम करता है।"

"मैंने उसे क्या कहा है," बाबूजी ने हैरान होकर पूछा।

"यों रुखाई के साथ नहीं बोलते। वह क्या सोचता होगा? इस तरह बेआबरूई किसी की नहीं करनी चाहिए।"

"क्या बक रही हो? मैंने उसे क्या कहा है?" बाबूजी बोले फिर सहसा वीरजी की ओर घूरकर कहने लगे, "अब तू बोल, भाई, क्या कहता है? कोई भी काम ढंग से करने देगा या नहीं?"

"मैंने कह दिया, पिताजी, आप अकेले जाइए और सवा रुपये लेकर सगाई डलवा लाइए।"

रसोईघर में चुप्पी छा गयी। इस समस्या का कोई हल नजर नहीं आ रहा था। वीरजी टस-से-मस नहीं हो रहे थे।

सहसा बाबूजी ने सिर पर पगड़ी उतारी और सिर आगे को झुकाकर बोले, "कुछ तो इन सफेद बालों का ख्याल कर! क्यों हमें रुसवा करता है?"

वीरजी गुस्से में थे। चाचा मंगलसेन गरीब है, इसीलिए उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता है। यह बात उसे खल रही थी। मगर जब बाबूजी ने पगड़ी उतारकर अपने सफेद बालों की दुहाई दी तो सहम गया। फिर भी साहस करके बोला, "यदि

आप अकेले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ले जाइए। बस, दो जने चले जायें।''

''कौन-से चाचा को?'' माँजी ने पूछा।

''चाचा मंगलसेन को।''

कोने में बैठे सन्तू ने भी हैरान होकर सिर उठाया। माँ झट से बोली, ''हाय-हाय बेटा, शुभ-शुभ बोलो! अपने रईस भाइयों को छोड़कर इस मरदूद को साथ ले जायें? सारा शहर थू-थू करेगा।!''

''माँजी, अभी तो आप कह रही थीं, खून का रिश्ता है। किधर गया खून का रिश्ता? चाचाजी गरीब हैं इसीलिए?''

''मैं कब कहती हूँ, यह न जाये! यह भी जाये, लेकिन और सम्बन्धी भी तो जायें। अपने धनी-मानी सम्बन्धियों को छोड़ दें और इस बहुरूपिये को साथ ले जायें, क्या यह अच्छा लगेगा?''

''तो फिर बाबूजी अकेले जायें।'' वीरजी परेशान हो उठे। ''मैंने जो कहना था कह दिया! अब जो तुम्हारे मन में आये करो, मेरा इससे कोई वास्ता नहीं।'' और उठकर रसोईघर से बाहर चले गये।

बेटे के यों उठ जाने से रसोईघर में चुप्पी छा गयी। माँ और बाप दोनों का मन खिन्न हो उठा। ऐसा शुभ दिन हो, बेटा घर पर आये और यों तकरार होने लगे। माँ का दिल टूक-टूक होने लगा। उधर बाबूजी का क्रोध बढ़ रहा था। उनका जी चाहता था कह दें, जा फिर मैं भी नहीं जाऊँगा। भेज दे जिसको भेजना चाहता है। मगर यह वक्त झगड़े को लम्बा करने का न था।

सबसे पहले माँ ने हार मानी, ''क्या बुरा कहता है! आजकल के लड़के माँ-बाप के हजारों रुपये लुटा देते हैं। इसके विचार तो कितने ऊँचे हैं! यह तो सवा रुपये में सगाई करना चाहता है। तुम मंगलसेन को ही अपने साथ ले जाओ। अकेले जाने से तो अच्छा है।''

बाबूजी बड़बड़ाये, बहुत बोले, मगर आखिर चुप हो गये। बच्चों के आगे किस माँ-बाप की चलती है? और चुपचाप उठकर अपने कमरे में जाने लगे।

''जा सन्तू, मंगलसेन को कह, तैयार हो जाये।'' माँजी ने कहा।

मनोरमा चहक उठी और भागी हुई वीरजी को बताने चली गयी कि बाबूजी मान गये हैं।

मंगलसेन को जब मालूम हुआ कि अकेला वही बाबूजी के साथ जायेगा, तो कितनी ही देर तक वह कोठरी में उचकता और चक्कर लगाता रहा। बदन का छटाँक-भर खून फिर उछलने लगा। जी चाहा कि सन्तू से उसी वक्त शर्त के दो रुपये रखवा ले। क्यों न हो, आखिर मुझसे बड़ा सम्बन्धी है भी कौन, मुझे नहीं ले जायेंगे तो किसे ले जायेंगे? मैं और बाबूजी ही इस घर के कर्त्ता-धर्त्ता हैं और कौन है? जितना ही अधिक वह इस बात पर सोचता, उतना ही अधिक उसे अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता। आखिर उसने कोने में रखी ट्रंकी को खोला और कपड़े बदलने लगा।

घण्टा-भर बाद जब मंगलसेन तैयार होकर आँगन में आया, तो माँजी का दिल बैठ गया—यह सूरत लेकर समधियों के घर जायेगा? मंगलसेन के सिर पर खाकी पगड़ी, नीचे मैली कमीज के ऊपर खाकी फौजी कोट, जिसके धागे निकल रहे थे और नीचे धारीदार पाजामा और मोटे-मोटे काले बूट। माँ को रुलाई आ गयी। पर यह अवसर रोने का नहीं था। अपनी रुलाई को दबाती हुई वह आगे बढ़ आयी।

''मनोरमा, जा भाई की आलमारी में से एक धुला पाजामा निकाल ला।'' फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोली, ''सुनते हो जी, अपनी एक पगड़ी इधर भेज देना मंगलसेन के पास ढंग से पगड़ी नहीं है।''

मंगलसेन का कायाकल्प होने लगा। मनोरमा पाजाम ले आयी। सन्तू बूट पालिस करने लगा। आँगन के ऐन बीचोंबीच एक कुर्सी पर मंगलसेन को बिठा दिया गया और परिवार के लोग उसके आसपास भाग-दौड़ करने लगे। कहीं से मनोरमा की दो सहेलियाँ भी आ पहुँची थीं। मंगलसेन पहले से भी छोटा लग रहा था। नंगा सिर, दोनों हाथ घुटनों के बीच जोड़े वह आगे की ओर झुककर बैठा था। बार-बार उसे रोमांच हो रहा था...

मंगलसेन का स्वप्न सचमुच साकार हो उठा। समधियों के घर में उसकी वह आवभगत हुई कि देखते बनता था। मंगलसेन आरामकुर्सी पर बैठा था और पीछे एक आदमी खड़ा पंखा झल रहा था। समधी आगे-पीछे, हाथ बाँधे घूम रहे थे। एक आदमी ने सचमुच झुककर बड़े आग्रह से कहा, ''और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और?''

और जवाब में मंगलसेन ने कहा, ''हाँ, आधा गिलास ले आओ।''

समधियों के घर की ऐसी सज-धज कि मंगलसेन दंग रह गया और उसका सिर हवा में तैरने लगा। आवाज ऊँची करके बोला, ''लड़की कुछ पढ़ी-लिखी भी है या नहीं? हमारा बेटा तो एम०ए० पास है?''

"जी, आपकी दया से लड़की ने इसी साल बी०ए० पास किया है।" "घर का काम-धन्धा भी कुछ जानती है या सारा वक्त किताबें ही पढ़ती रहती है?"

"जी, थोड़ा-बहुत जानती है।"

"थोड़ा-बहुत क्यों?"

आखिर सगाई डलवाने का वक्त आया। समधी बादामों से भरे कितने ही थाल लाकर बाबूजी और मंगलसेन के सामने रखने लगे। बाबूजी ने हाथ बाँध दिये, "मैं तो केवल एक रुपया और चार आने लूँगा। मेरा इन चीजों में विश्वास नहीं है। हमें अब पुरानी रस्मों को बदलना चाहिए। आप सलामत रहें, आपका सवा रुपया भी मेरे लिए सवा लाख के बराबर है।"

"आपको किस चीज की कमी है, लालाजी। पर हमारा दिल रखने के लिए ही कुछ स्वीकार कर लीजिए।"

बाबूजी मुसकराये, "नहीं महाराज, आप मुझे मजबूर न करें। यह उसूल की बात है। मैं तो सवा रुपया ही लेकर जाऊँगा। आपका सितारा बुलन्द रहे! आपकी बेटी हमारे घर आयेगी, तो साक्षात् लक्ष्मी विराजेगी!"

मंगलसेन के लिए चुप रहना असम्भव हो रहा था। हुमककर बोला, "एक बार कह जो दिया जी कि हम सवा रुपया ही लेंगे। आप बार-बार तंग क्यों करते हैं?"

बेटी के पिता हँस दिये और पास खड़े अपने किसी सम्बन्धी के कान में बोले, "लड़के के चाचा हैं, दूर के। घर में टिके हुए हैं। लालाजी ने आसरा दे रखा है।"

आखिर समधी अन्दर से एक थाल ले आये, जिस पर लाल रंग का रेशमी रूमाल बिछा था और बाबूजी के सामने रख दिया। बाबूजी ने रूमाल उठाया, तो नीचे चाँदी के थाल में चाँदी की तीन चमचम करती कटोरियाँ रखी थीं, एक में केसर, दूसरी में रांगला धागा, तीसरी में एक चमकता चाँदी का रुपया और चमकती चवन्नी। इसके अलावा तीन कटोरियों में तीन छोटे-छोटे चाँदी के चम्मच रखे थे।

"आपने आखिर अपनी ही बात की," बाबूजी ने हँसकर कहा, "मैं तो केवल सवा रुपया लेने आया था..." मगर थाल स्वीकार कर लिया और मन-ही-मन कटोरियों, थाल और चम्मचों का मूल्य आँकने लगे।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ छज्जे पर खड़ी थीं जब दोनों भाई सड़क पर आते दिखायी दिये। मंगलसेन के कन्धे पर थाल था, लाल रंग के रूमाल से ढँका हुआ और आगे-आगे बाबूजी चले आ रहे थे।

वीरजी अब भी अपने कमरे में थे और पलँग पर लेटे किसी नावेल के पन्नों में अपने मन को लगाने का विफल प्रयास कर रहे थे। उनका माथा थका हुआ था, मगर हृदय धूमिल भावनाओं से उद्वेलित होने लगा था। क्या प्रभा मेरे लिए भी कोई सन्देश भेजेगी? सवा रुपये में सगाई डलवाने के बारे में वह क्या सोचती होगी? मन-ही-मन तो जरूर मेरे आदर्शों को सराहती होगी। मैंने एक गरीब आदमी को अपनी सगाई डलवाने के लिए भेजा। इससे अधिक प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे आदर्शों का क्या हो सकता है?

"लाख-लाख बधाइयाँ, भौजाईजी!" घर में कदम रखते ही मंगलसेन ने आवाज लगायी।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ भागती हुई जंगले पर आ गयीं। बाबूजी गम्भीर मुद्रा बनाये, आँगन में आये और छड़ी कोने में रखकर अपने कमरे में चले गये।

मनोरमा भागती हुई नीचे गयी और झपटकर थाल चाचा मंगलसेन के हाथ से छीन लिया।

"कैसी पगली है! दो मिनट इन्तजार नहीं कर सकती।"

"वाह जी, वाह!" मनोरमा ने हँसकर कहा, "बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबू जी ही बन बैठे हैं! लाइये, मुझे दीजिये। आपका काम पूरा हो गया।"

माँजी की दोनों बहनें जो इस बीच आ गयी थीं, माँजी से गले मिल-मिलकर बधाई देने लगीं। आवाज सुनकर वीरजी भी जंगले पर आ खड़े हुए और नीचे आँगन का दृश्य देखने लगे। थाल पर रखे लाल रूमाल को देखते ही उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। सहसा ही वह ससुराल की चीजों से गहरा लगाव महसूस करने लगे। इस रूमाल को जरूर प्रभा ने अपने हाथ से छुआ होगा। उनका जी चाहा कि रूमाल को हाथ में लेकर चूम लें। इस भेंट को देखकर उनका मन प्रभा से मिलने के लिए बेताब होने लगा।

माँजी ने थाल पर से रूमाल उठाया। चमकती कटोरियाँ, चमकता थाल, बीच में रखे चम्मच। वीरजी को महसूस हुआ, जैसे प्रभा ने अपने गोरे-गोरे हाथों से इन चीजों को करीने से सजाकर रखा होगा।

"पानी पिलाओ, सन्तू", चाचा मंगलसेन ने आँगन में कुर्सी पर बैठते हुए, टाँग के ऊपर टाँग रखकर, सन्तू को आवाज लगायी।

इतने में माँजी की याद आयी, "तीन कटोरियाँ और दो चम्मच? यह क्या हिसाब हुआ? क्या तीन चम्मच नहीं दिये समधियों ने?" फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोलीं, "अजी सुनते हो! तुम भी कैसे हो, आज के दिन भी कोई अन्दर जा बैठता है?"

"क्या है?" बाबूजी ने अन्दर से ही पूछा।

"कुछ बताओ तो सही, समधियों ने क्या कुछ दिया है?"

"बस, थाली में जो कुछ है वही दिया है, तेरे बेटे ने मना जो कर दिया था।"

"क्या तीन कटोरियाँ थीं और दो चम्मच थे?"

"नहीं तो, चम्मच भी तीन थे।"

"चम्मच तो यहाँ सिर्फ दो रखे हैं।"

"नहीं-नहीं, ध्यान से देखो, जरूर तीन होंगे। मंगलसेन से पूछो, वही थाल उठाकर लाया था।"

"मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?"

मंगलसेन सन्तू को सगाई का ब्योरा दे रहा था। समधी हमारे सामने हाथ बाँधे यों खड़े थे, जैसे नौकर हों। लड़की बड़ी सुशील है, बड़ी सलीके वाली, बी०ए० पास है, सीना-पिरोना भी जानती है..."

'मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?"

"कौन-सा चम्मच? वहीं थाल में होगा।" मंगलसेन ने लापरवाही से जवाब दिया।

"थाल में तो नहीं है।"

"तो उन्होंने दो ही चम्मच दिये होंगे। बाबूजी ने थाल लिया था।"

"हमें बेवकूफ बना रहे हो, मंगलसेनजी, तुम्हारे भाई कह रहे हैं तीन चम्मच थे!"

इतने में बाबूजी की गरज सुनायी दी, "इसीलिए मेरे साथ गये थे कि चम्मच गवाँ आओगे? कुछ नहीं तो पाँच-पाँच रुपये का एक-एक चम्मच होगा।

मंगलसेन ने उसी लापरवाही से कुर्सी पर से उठकर कहा, "मैं अभी जाकर पूछ आता हूँ। इसमें क्या है? हो सकता है, उन्होंने दो ही चम्मच रखे हों।"

"वहाँ कहाँ जाओगे? बताओ चम्मच कहाँ है? सारा वक्त तो थाल पर रूमाल रखा रहा।"

"बाबूजी, थाल तो आपने लिया था, आपने चम्मच गिने नहीं थे?"

"मेरे साथ चालाकी करता है? बदजात! बता तीसरा चम्मच कहाँ है?"

माँजी चम्मच खो जाने पर विचलित हो उठी थीं। बहनों की ओर घूमकर बोलीं, "गिनी-चुनी तो समधियों ने चीजें दी हैं, उनमें से भी अगर कुछ खो जाय, तो बुरा तो आखिर लगता ही है!"

"कैसा ढीठ आदमी है, सुन रहा है और कुछ बोलता नहीं!" बाबूजी ने गरजकर कहा।

चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्सा आ गया। प्रभा ने चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं। प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खो गयी। वीरजी सहसा आवेश में आ गये। वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कन्धों से पकड़कर झिंझोड़ दिया।

"आपको इसीलिए भेजा था कि आप चीजें गँवा आयें?"

सभी चुप हो गये। सकता-सा छा गया। वीरजी खिन्न-से महसूस करने लगे कि मुझसे यह क्या भूल हो गयी और झेंपकर वापस जाने लगे।

"तुम बीच में मत पड़ो, बेटा! अगर चम्मच खो गया है तो तुम्हारी बला से! सबका धर्म अपने-अपने साथ है। एक चम्मच से कोई अमीर नहीं बन जायेगा!"

"जेब तो देखो इसकी।" बाबूजी ने गरजकर कहा।

मौसियाँ झेंप गयीं और पीछे हट गयीं। पर मनोरमा से न रहा गया। झट आगे बढ़कर वह जेब देखने लगी। रसोईघर की दहलीज पर सन्तू हाथ में पानी का गिलास उठाये रुक गया और मंगलसेन की ओर देखने लगा। चाचा मंगलसेन खड़ा कभी एक का मुँह देख रहा था, कभी दूसरे का। वह कुछ कहना चाहता था, मगर मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था।

एक जेब में से मैला-सा रूमाल निकला, फिर बीड़ियों की गड्डी, माचिस, छोटा-सा पेन्सिल का टुकड़ा।

"इस जेब में तो नहीं है।" मनोरमा बोली और दूसरी जेब देखने लगी। मनोरमा एक-एक चीज निकालती और अपनी सहेलियों को दिखा-दिखाकर हँसती।

दायीं जेब में कुछ खनका। मनोरमा चिल्ला उठी, ''कुछ खनका है, इसी जेब में है, चोर पकड़ा गया! तुमने सुना, मालती?''

जेब में टूटा हुआ चाकू रखा था, जो चाबियों के गुच्छे से लगकर खनका था।

''छोड़ दो, मनोरमा! जाने दो, सबका धर्म अपने-अपने साथ है। आपसे चम्मच अच्छा नहीं है, मंगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी।''

मंगलसेन की साँस फूलने लगी और टाँगें काँपने लगीं, लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था।

''दोनों कान खोलकर सुन ले, मंगलसेन!'' बाबूजी ने गरजकर कहा, ''मैं तेरे से पाँच रुपये चम्मच के ले लूँगा, इसमें मैं कोई लिहाज नहीं करूँगा।''

मंगलसेन खड़े-खड़े गिर पड़ा।

''बधाई, बहनजी!'' नीचे आँगन में से तीन-चार स्त्रियों की आवाज एक साथ आ गयी।

मंगलसेन गिरा भी अजीब ढंग से। धम्म से जमीन पर जो पड़ा तो उकड़ूँ हो गया, और पगड़ी उतरकर गले में आ गयी। मनोरमा अपनी हँसी रोके न रोक सकी।

''देखो जी, कुछ तो खयाल करो। गली-मुहल्ला सुनता होगा। इतनी रुखाई से भी कोई बोलता है!'' माँजी ने कहा, फिर घबराकर सन्तू से कहने लगीं, ''इधर आओ सन्तू, और इन्हें छज्जे पर लिटा आओ।''

वीरजी फिर खिन्न-सा अनुभव करते हुए अपने कमरे में चले गये। मैंने जल्दबाजी की, मुझे बीच में नहीं पड़ना चाहिए था। इन्होंने चम्मच कहाँ चुराया होगा, जरूर कहीं गिर गया होगा।

बाबूजी नीचे अपने कमरे में चले गये। शीघ्र ही घर में ढोलक बजने की आवाज आने लगी। मनोरमा और उसकी सहेलियाँ आँगन में कालीन बिछवाकर बैठ गयीं। ढोलक की आवाज सुनकर पड़ोसिनें घर में बधाई देने आने लगीं।

ऐन उसी वक्त गलीवाले दरवाजे के पास एक लड़का आ खड़ा हुआ। संकोचवश वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि अन्दर जाय या वहीं खड़ा रहे। मनोरमा ने देखते ही पहचान लिया कि प्रभा का भाई, वीरजी का साला है। भागी हुई उसके पास जा पहुँची और शरारत से उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

''आओ, बेटाजी, अन्दर आओ, तुम यहाँ पड़ोस में रहते हो न?''

''नहीं, मैं प्रभा का भाई हूँ।''

''मिठाई खाओगे?'' मनोरमा ने फिर शरारत से कहा और हँसने लगी।

लड़का सकुचा गया।

''नहीं, मैं तो यह देने आया हूँ,'' उसने कहा और जाकेट की जेब में से एक चमकता, सफेद चम्मच निकाला और मनोरमा के हाथ में देकर उन्हीं कदमों वापस लौट गया।

''हाय, चम्मच मिल गया! माँजी चम्मच मिल गया!''

पर माँजी सम्बन्धियों से घिरी खड़ी थीं। मनोरमा रुक गयी और माँ से नजरें मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी। चम्मच को कभी नाक पर रखती, कभी हवा में हिलाती, कभी ऊँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर माँजी कुछ समझ ही नहीं रही थीं....

छज्जे पर सन्तू ने मंगलसेन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छींटा देते हुए बोला, ''तुम शर्त जीत गये। बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नकद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा।''

अभ्यास प्रश्न

1. 'खून का रिश्ता' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
2. 'खून का रिश्ता' कहानी के आधार पर 'मंगलसेन' का चरित्र-चित्रण कीजिए।
3. 'खून का रिश्ता' कहानी के आधार पर 'वीरजी' का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. 'खून का रिश्ता' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए। **[2016 SA, SE, SG, 17MF, 19CR 20 ZF,]**
5. 'खून का रिश्ता' कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

6. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'खून का रिश्ता' कहानी की समीक्षा कीजिए। **[2017 MD, 19 CL, CO, 20 ZE]**
7. 'खून का रिश्ता' कहानी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए और उपयुक्त उदाहरण दीजिए।
8. कहानी-कला की दृष्टि से 'खून का रिश्ता' की समीक्षा कीजिए। **[2020 ZC, ZD]**
9. 'खून का रिश्ता' कहानी के आधार पर 'सन्तू' का चरित्र-चित्रण कीजिए।
10. प्रस्तुत कहानी को आधार मानकर भीष्म साहनी की कहानी-कला की विशेषताएँ लिखिए।
11. कहानी के प्रमुख तत्त्वों के आधार पर 'खून का रिश्ता' कहानी की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
12. 'खून का रिश्ता' कहानी के नामकरण की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।
13. 'खून का रिश्ता' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
14. उद्देश्य की दृष्टि से 'खून का रिश्ता' की समीक्षा कीजिए।
15. 'खून का रिश्ता' कहानी की विषय-वस्तु संक्षेप में लिखिए।
16. 'खून का रिश्ता' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्रांकन कीजिए।
17. 'खून का रिश्ता' कहानी के प्रमुख पात्र की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
18. 'खून का रिश्ता' कहानी के तथ्यों को प्रस्तुत कीजिए। **[2108 AA]**
19. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'खून का रिश्ता' कहानी का वर्णन कीजिए।
20. 'खून का रिश्ता' कहानी के तथ्यों पर प्रकाश डालिए।